उनसे जो पचास के हो चले

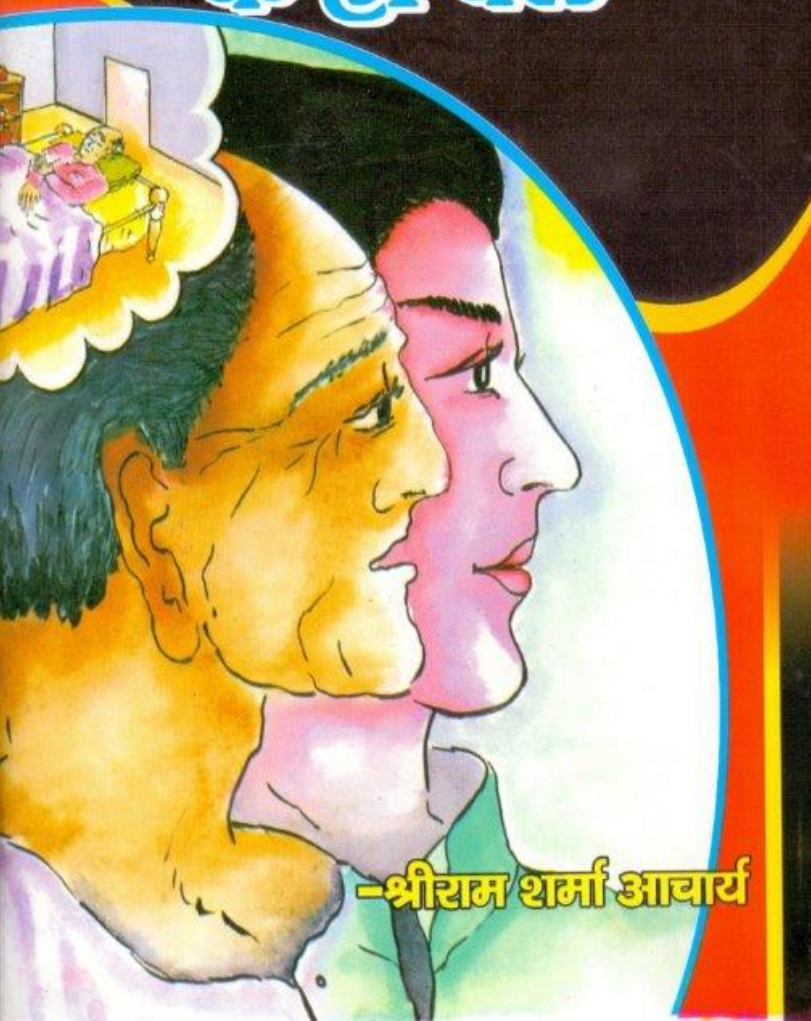

-श्रीराम शर्मा आचार्य

उनसे–जो पचास के हो चले

मानव–जीवन को सुविधा की दृष्टि से दो भागों में बाँटा जा सकता है–पूर्वार्द्ध दूसरा उत्तरार्द्ध । यदि सौ वर्ष की आयु मानी जाय तो प्रथम पचास वर्षों को पूर्वार्द्ध और इक्यावन से सौ वर्ष की आयु को उत्तरार्द्ध कहा जा सकता है ।

मनीषियों ने इन दो खण्डों को दो कार्यक्रमों में विभक्त किया है । प्रथम पचास वर्ष का समय समाज के सहयोग एवं अनुदान के आधार पर वह अपनी व्यक्तिगत शक्तियों और सुविधाओं को बढ़ाते हुए सुखोपभोग करता है । धन, मान, विनोद, परिवार आदि वैभव प्राप्त करते हुए विभिन्न प्रकार के लाभ एवं आनन्द लेता है । उत्तरार्द्ध में इस ऋण–अनुदान को चुकाता है ताकि उसे इस संसार से ऋणी होकर विदा न होना पड़े । इस जगत में ईश्वर की विधि–व्यवस्था पूर्ण तथा नियमबद्ध है । जो व्यक्ति ऋणी बनकर मरते हैं, वे उस ऋण भार को अगले जन्मों में चुकाते हैं । ८४ लाख योनियों में से एक मनुष्य योनि को छोड़कर शेष सभी भोग योनियाँ हैं । उनमें नया विचारपूर्ण कर्तृत्व सम्भव नहीं । बुद्धि के अभाव में जो विधान उनके साथ जुड़ा हुआ है, उसके अनुसार वे अपनी जिन्दगी के दिन पूरे करते हैं ।

मनुष्य जीवन इसलिए नहीं मिला–मनुष्य जीवन सुख–चैन के लिए मौज–मजा करने के लिए नहीं है । इसके साथ अगणित वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य जुड़े हुए हैं । प्रधानमन्त्री को ऊँचा वेतन, कोठी, सवारी, नौकर आदि कितनी ही तरह की ऐसी सुविधायें मिलती हैं, जो अन्य सरकारी कर्मचारियों को नहीं मिलतीं, पर विशेष सुविधाओं के साथ–साथ प्रधानमन्त्री पर अनेक उत्तरदायित्व भी होते हैं । यदि वह उन्हें पूरा नहीं करता तो तत्काल पदच्युत कर दिया जाता है और सारे राष्ट्र की घृणा एवं भर्त्सना का भागी बनता है । फौज के ऊँचे अफसर यदि अपना कर्तव्य पालन नहीं करते तो उन्हें कोर्टमार्शल करके मौत के घाट उतार दिया जाता है । मनुष्य को अन्य सभी प्राणियों से अधिक सुविधायें प्राप्त हैं, पर साथ ही उतने ही अधिक कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व भी उसके कन्धे पर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं । सामाजिक व्यवस्था को सन्तुलित बनाये रखना सभी जीवों की सुख–सुविधा के उपयुक्त वातावरण बनाना, आस–पास की गन्दगी को साफ करना, पिछड़े हुओं को ऊँचा उठाने में सहायता करना, दुःखियों की सहायता करना जैसे अनेक कर्तव्य भी उसके 'ऊपर हैं । जो बुद्धि, प्रतिभा एवं महत्ता उपलब्ध हुई है, वह खाने, पीने, मौज उड़ाने और अपनी ही संकीर्ण स्वार्थपरता में समाप्त कर देने के लिए नहीं है । यदि प्राप्त उपलब्धियों को आहार, निद्रा, भय, मैथुन में, तृष्णा–वासनाओं में ही खर्च कर दिया जाय तो जो सृष्टि–सन्तुलन के कर्तव्य इसे सौंपे गये थे, वे पूरे नहीं होते और इस उपेक्षा के दण्ड स्वरूप फौजी अफसर के कोर्ट मार्शल जैसी सजा चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने को मिलती है । हर योनि में विविध प्रकार के कष्ट एवं अभाव सहने पड़ते हैं ।

कुछ प्राणी ऐसे हैं जो मनुष्य प्राणी से सम्बद्ध हैं और उसी के लिए आजीवन श्रम एवं त्याग करते रहते हैं । गाय, बैल, भैंस, बकरी, घोड़ा, गधा, ऊँट, कुत्ता आदि ऐसे ही जीव हैं, जिन्हें मनुष्य के लिए आजीवन कठोर श्रम करना पड़ता है । यह वही लोग हैं जिन्होंने पिछले जन्मों में मनुष्य होने पर ऋण तो अनेकों का लिया, किन्तु चुकाया नहीं । कर्ज मारकर भाग जाने की इस सृष्टि में कोई सुविधा नहीं । मरने के बाद भी वह वसूल कर लिया जाता है । गधे, घोड़े, बैल, ऊँट आदि को अपना कर्ज चुकाते हुए सारी जिन्दगी व्यतीत करनी पड़ती है । यदि मनुष्य जन्म से ही उनने यह ध्यान रखा होता कि जो ऋण हम ले रहे हैं, उसे चुकाने का भी ध्यान रखें तो उन्हें इन योनियों में जन्मने और इस प्रकार का ऋण चुकाने का कष्ट सहन न करना पड़ता ।

ऋण से उऋण हों–ऋण केवल पैसे का ही नहीं होता । श्रम, सहयोग एवं भावनाओं का भी होता है । अन्य प्राणी तो जन्म से कुछ ही समय बाद स्वावलम्बी हो जाते हैं और अपने आप अपनी शारीरिक, मानसिक आवश्यकताऐं पूरी करने लगते हैं, पर मनुष्य का बालक बहुत समय तक स्वावलम्बी तो क्या बन सकेगा, दूसरों की सहायता के बिना जीवित भी नहीं रह सकता । माता उसे दूध न पिलाये, मल–मूत्र न धोये, स्नान न कराये, कपड़े न पहिनाये तो उसका जीवित रह सकना संभव

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

नहीं । आरम्भ में तो वह करवट तक नहीं बदल पाता वह भी माता को ही बदलवानी पड़ती है । बड़ा होने पर जब तक अपनी कमाई न करने लगे तब तक उसे पिता की कमाई और माता की पाकशाला पर निर्भर रहना पड़ता है । भोजन, वस्त्र, निवास, मनोरंजन, जेवर, खर्च, फीस, पुस्तकें, दवा–दारू सभी खर्च तो अभिभावक उठाते हैं । क्या बच्चा इसका मूल्य चुकाया करता है ? नहीं, यह सब कुछ बिना मूल्य सेवा एवं सहृदयता के उपहार रूप में उसे प्राप्त हुआ । अध्यापकों ने शिक्षा दी, उसकी फीस जरूर देनी पड़ी, पर वह ज्ञान जो मिला, फीस से हजारों गुने अधिक मूल्य का था । शब्दों में उच्चारण से लेकर अक्षरों के लिखने तक का जो परिष्कृत स्वरूप सामने आया, उसमें हजारों वर्षों की, लाखों व्यक्तियों की सूझ–बूझ और श्रम–साधना सम्मिलित है, फिर स्कूल में अक्षर और शब्द ही तो नहीं पढ़ाये जाते, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान अनेक विषय सम्मिलित होते हैं, उस ज्ञान की शोध करके वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने में सहस्रों लोगों का अनवरत श्रम सम्मिलित है । उसकी कीमत दो–चार रुपया स्कूली फीस के रूप से नहीं चुकाई जा सकती । बेशक पुस्तकें पैसे के बदले में खरीदी गई हैं, पर वह कीमत कागज, छपाई तथा मुद्रक, प्रकाशक एवं विक्रेता के श्रम की है । जो कुछ पुस्तकों में लिखा गया है, उस जानकारी के लिए अपना जीवन खपाने वालों का तो अपने ऊपर अनन्त उपकार का बोझ बना ही रहा ।

विवाह हुआ, धर्मपत्नी आई । उसकी सेवा, सहायता, सद्भावना, आत्म–समर्पण का मूल्य क्या रोटी–कपड़े के रूप में ही चुक जायगा ? शरीर निर्वाह की व्यवस्था तो केवल ब्याज मात्र है, पत्नी का आत्मदान तो ऋण रूप में अपने ऊपर लदा ही रहा । व्यापार किया, लाभ हुआ, पर वह लाभ तो ग्राहकों के सहयोग से ही सम्भव हुआ । यदि वे असहयोग करते, आपकी दुकान पर खरीद करने न आते तो लाभ कहाँ से होता ? नौकरी में तरक्की हुई, वेतन बढ़ा तो इसमें अफसरों, साथियों एवं जिनने अपने से सन्तोष पूर्वक सेवा स्वीकार की उन सबका भी तो सहयोग है । यदि वे सभी रुष्ट हो गये होते, तो वेतन बढ़ना तो दूर, नौकरी बनी रहना भी कठिन हो जाता । बीमारी के समय जिन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

चिकित्सकों ने उपचार किया और मृत्यु तक के खतरे को टाल दिया, उनके उपकार का मूल्य दवा की कीमत आदि के रूप में नहीं चुकाया जा सकता । वह तो औषधियों में पड़े सामान तथा बनाने वाले, बेचने वाले के परिश्रम का मूल्य है । जिस प्रयत्न और अध्यवसाय द्वारा चिकित्सा शास्त्र का निर्माण हुआ, औषधियों में पड़ने वाले पदार्थों में वनस्पतियों के गुण–दोष की खोज हुई और सांगोपांग चिकित्सा पद्धति का ढाँचा बनकर खड़ा हुआ, उसमें लगे हुए अगणित अन्वेषकों के अध्यवसाय का मूल्य कौन चुकावेगा ?

यह सब उपकार ही उपकार हैं, जितने भी सुख–सुविधा के साधन हमें उपलब्ध हैं उनमें से एक–एक को बताने में चिर अतीत से अगणित लोगों का श्रम लगता रहा है और अब भी लाखों–करोड़ों व्यक्तियों का श्रम लग रहा है । यदि ऐसा न हुआ तो एकाकी मनुष्य समस्त साधन सुविधाओं से वञ्चित रहकर आजन्म वन्य पशुओं की तरह किसी प्रकार जिन्दगी के दिन पूरे कर रहा होता ।

अगणित व्यक्तियों के अगणित उपकार–अपने उपयोग में आने वाली एक छोटी–सी वस्तु को लीजिए और देखिए कि उसे वर्तमान रूप में पहुँचने में कितने लोगों का श्रम लगा है । एक छोटे से रूमाल को लीजिए, वह कहाँ से आया, कैसे बना, इस प्रकार गम्भीरतापूर्वक विचार कीजिए । किसान ने खेत में कपास बोई, उससे रुई बनी, सूत कता, कपड़ा बुना, दुकान पर आया, आपने खरीदा, मोटी दृष्टि से उतने ही लोगों का श्रम–सहयोग उसमें लगा है, पर बारीकी से देखा जाय तो इस छोटी–सी प्रक्रिया में ही अगणित लोगों का ज्ञान, श्रम–सहयोग, अध्यवसाय एवं सद्भाव सम्मिलित मिलेगा । किसान ने जिस हल से खेत जोता उसे बनाने में लुहार और बढ़ई का श्रम लगा, जो लोहा उसमें लगा वह लोहे की खान में से निकलने के बाद गला, ढला एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाया गया । खान से लोहा निकालने और उसे साफ करने में बड़ी मशीनों के बनाने में अनेकों कारीगरों, इन्जीनियरों का सहयोग मिला । इन्जीनियरों ने वह चन्द पुस्तकों से पढ़ा । वे पुस्तकें प्रेस में छपीं, प्रेस और कागज बनाने में फिर अनेकों का श्रम एवं ज्ञान

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लगा । पुस्तकें, मशीनें आदि इधर से उधर लाने ले जाने में रेल, मोटर आदि वाहनों का उपयोग हुआ । इन वाहनों में छोटी–बड़ी असंख्यों वस्तुऐं लगीं और उनके बनाने, उपयोग करने से कितनों को ही बहुत कुछ करना पड़ा । इतनी लम्बी बेल तो अकेले हल की फैल रही है । उस रूमाल के बनाने में हल के अतिरिक्त रुई उत्पन्न होने से लेकर कपड़ा बुने जाने और खरीदे जाने तक जो–जो काम हुए हैं, उन सबकी यदि ऐसी ही बेल फैलाई जाय तो पता चलेगा कि प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से करोड़ों व्यक्तियों का सहयोग किसी न किसी रूप से रूमाल में लग चुका है । रूमाल जैसी ढेरों चीजें हमारे दैनिक उपयोग में आती हैं । साबुन, शीशा, कंघी, तेल, मंजन, रुई, दियासलाई जैसी छोटी–छोटी चीजों के बनाने में समाज के कितने लोग सहयोगी रहे हैं । फिर जीवन की पूरी गतिविधियों और आवश्यकताओं से सम्बन्धित वस्तुओं एवं व्यक्ति के सहयोग सम्बन्धी विचार किया जाय तब तो स्पष्टतः संसार के अधिकांश मनुष्यों का ही नहीं पशु–पक्षियों एवं वृक्षों का भी असाधारण उपकार जुड़ा हुआ मिलेगा ।

तात्पर्य है कि मनुष्य की बुद्धिमत्ता एवं प्रगति इस बात पर निर्भर है कि उसे दूसरों का कितना अधिक सहयोग मिला । भेड़िये ने आगरा जिले के खन्दोली गाँव के पास एक मनुष्य के बच्चे को उठा लिया और खाने के स्थान पर उसे पाल लिया । शिकारियों द्वारा उस भेड़िये को मारकर यह मनुष्य का आठ वर्षीय बालक पकड़ा गया तो उसकी बोलने, खाने, चलने आदि की सारी चेष्टायें भेड़ियों जैसी ही थी, बच्चे को लखनऊ मेडिकल कॉलेज में रखा गया, उसका नाम राजू था । उसे मनुष्य की तरह रहने, खाने की शिक्षा ८ वर्षों से दी जाती रही, पर वह अपने जंगली संस्कार नहीं छोड़ पाया । उससे प्रकट होता है कि यदि मनुष्य को दूसरों के सहयोग से वंचित रहना पड़े तो वह वन्य पशुओं से भी गया–गुजरा अशक्त–असमर्थ ही बना रहे । उसकी बुद्धिमत्ता का विकास तो सहयोग प्रवृत्ति के कारण हुआ है । परस्पर मिल–जुलकर रहने और एक–दूसरे की सेवा–सहायता करने से ही मनुष्य की अब तक की सारी प्रगति सम्भव हुई ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सहयोग से ही प्रगति सम्भव—मनुष्य पग—पग पर दूसरों से उपकृत होता है । जो जितना सुखी, समृद्ध एवं प्रसन्न है, समझना चाहिए कि उसे दूसरों के उपकार का उतना ही अधिक लाभ मिला है । यह सहयोग जिसे जितना कम मिलता है, वह उतना ही निराश चिन्तित, दुखी, असफल एवं अस्वस्थ पाया जाता है । जिसके परिवारी असहयोग रखे रहे होंगे, स्त्री का विरोध, पुत्रों की अवज्ञा, भाइयों का द्वेष चल रहा हो तो उस घर में रहते हुए क्या सुख मिलेगा ? जिसके स्वजन सम्बन्धी स्नेह की वर्षा करते हैं, उसे आर्थिक या शारीरिक कठिनाई रहते हुए भी जीवन—यापन करना भार नहीं लगता । प्रेम के आनन्द का बखान करते—करते कभी थकते नहीं, शास्त्रों में प्रेम को परमेश्वर का रूप बताया गया है । यह प्रेम पारस्परिक सहयोग का शारीरिक एवं मानसिक समीपता का ही दूसरा नाम है । जो जिसे प्रेम करता है, उसे उसके उपकार एवं सहयोग की ही बात निरन्तर सोचते रहना पड़ता है और यह भाव जहाँ प्रेमी को लाभ पहुँचाता है, वहाँ प्रेम करने वाले को भी कोई दोष प्रदान नहीं करता ।

जिसने इस संसार में जितना सुख पाया है, समझना चाहिए कि उसे दूसरों का उतना ही सहयोग मिला है । यह ठीक है कि उस सहयोग की अपने में पात्रता होनी चाहिए अन्यथा कुपात्रता से खिन्न होकर उदार व्यक्ति भी अनुदार और सहयोगी भी द्वेषी बन जायेंगे । फिर भी पात्रता अपने आप में अपूर्ण है । सामने वालों का सद्भाव भी उसमें समन्वित होना चाहिए । हम जितनी प्रगति कर पाते हैं, उसके मूल में किसका कितना सहयोग रहा है इस पर उदार दृष्टि से विचार करें तो यही प्रतीत होगा कि अगणित व्यक्तियों की विभिन्न प्रकार की सज्जनता, सद्भावना एवं उदारता के फलस्वरूप ही अधिक सुखी एवं सन्तुष्ट रहने का अवसर मिला ।

उत्तरार्द्ध का श्रेष्ठता में सदुपयोग—जीवन का पूर्वार्द्ध प्रायः इसी प्रकार व्यतीत होता है, जिसमें व्यक्तिगत सफलताओं एवं सुखोपभोग का बाहुल्य रहता है । विद्या पढ़ने से लेकर विवाह होने और धन कमाने से लेकर सन्तान सुख तक जितने प्रकार की उपलब्धियाँ हैं, वे प्रायः इस

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पूर्वार्द्ध में अधिकाधिक मात्रा में मिल लेती हैं । अस्तु सहयोगियों का ऋण भी अधिकाधिक चढ़ जाता है । इन उपकारों का ऋण चुकाने के लिए जीवन का उत्तरार्द्ध निर्धारित किया गया है । अब तक लोगों का उपकार अधिक मिला और उसका बदला कम चुकाया गया था । अब उत्तरार्द्ध में यह क्रम बनाना है कि उपकार किया अधिक जाय, लिया कम जाय । हिसाब तभी तो बराबर होगा अन्यथा जीवन के अन्त तक यदि दूसरों की उदारता का लाभ ही अधिकाधिक मात्रा में लेते रहा गया, बदला न चुका तो ऋण इतना अधिक चढ़ जायगा कि शरीर त्यागने का अवसर आने तक उसका भार असहनीय दिखाई देने लगेगा ।

सृष्टि के समस्त प्राणियों की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट मानव–जीवन हमें ईश्वर ने इसलिए प्रदान किया है कि उसमें सन्निहित अगणित श्रेष्ठ सामर्थ्यों को इस प्रकार खर्च किया जाय कि इस संसार को अधिकाधिक सुख, शान्तिमय श्रेष्ठ एवं सुन्दर बनाने के ईश्वरीय प्रयोजन में सहायता मिल सके । यदि ऐसा न होता तो मनुष्य को ही ऐसे दिव्य–जीवन का लाभ क्यों देता ? अन्य प्राणियों को इन विशेषताओं से वंचित क्यों रखता ? किसी की अच्छी किसी की बुरी परिस्थितियों वाला शरीर देने में यों ईश्वर का पक्षपात दीखता है, पर वस्तुस्थिति यह है कि ऐसा उसने विशेष प्रयोजन के लिए ही किया है । उसने आशा रखी है और कामना की है कि मानव–प्राणी इन अतिरिक्त उपलब्धियों का सृष्टि–सन्तुलन की व्यवस्था में सहयोगी बनकर सदुपयोग करेगा, पर जब मनुष्य उस निर्धारित कर्तव्य की ओर से मुँह मोड़करखड़ा हो जाता है और दूसरों से अधिकाधिक सहयोग बटोरता हुआ अपने व्यक्तिगत लाभ का उपार्जन करता रहता है, तो ईश्वर को निराशा ही होती है । उसकी दृष्टि में मनुष्य कर्तव्य त्यागने के पाप का अपराधी ही ठहरता है ।

स्वार्थी जीवन बिताना आध्यात्मिक दृष्टि से एक अपराध है । सामाजिक दृष्टि से ऋण बटोरने और कर्जदार बनने जैसा अनैतिक है । दोनों ही दृष्टि से जो पापी–अपराधी बनता चला जाता है, वह आगे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

फिर मनुष्य–जन्म न पा सकेगा । उसे निकृष्ट कष्टदायक योनियों में भ्रमण करना पड़ेगा । कानून तोड़ने वाले और दूसरों के साथ अन्याय बरतने वाले अपराधी न्यायालय से दण्ड पाते हैं और जेलखाने की कठोर यातनायें भुगतते हैं । इसी प्रकार वे व्यक्ति, जिनने सारा जीवन स्वार्थपरता में गँवा दिया, मनुष्य–शरीर त्यागते ही कीट–पतंगों जैसी योनियो में चले जाते हैं और अभावग्रस्त कष्ट साध्य जीवन व्यतीत करते हैं । गधा, घोड़ा, ऊँट, बैल, कुत्ता आदि बनकर उनका ऋण चुकाते हैं जिनका सहयोग लिया तो बहुत कुछ था, पर बदला चुकाने से कतराते रहे थे । मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र होने से ऋण समेटने की चतुरता करने और बदला चुकाने में आनाकानी कर जाने को स्वतंत्र हैं, पर उस कुटिलता के दण्ड से बच नहीं सकता । ईश्वर की इस सुव्यवस्थित सृष्टि में न्याय की, कर्मफल की समुचित व्यवस्था विद्यमान है । यहाँ कोई चालाक धूर्तता के आधार पर मनमानी नहीं कर सकता । आज के दुष्कर्मों का फल, कल तो उसे भोगना ही होता है । आज अपनी बारी है तो स्वार्थपरता बुद्धिमानी जैसी लगती है, पर कल जब न्याय का पलड़ा ऊपर होगा और अपने को नारकीय यन्त्रणायें सहने को विवश होना पड़ेगा तो आज जिसे चतुरता समझकर गर्व किया जाता है, कल वही परले सिरे की मूर्खता प्रतीत होगी ।

श्रेष्ठ परम्परा का पालन करें–इस दुखद स्थिति से मानव–प्राणी को बचाये रहने के लिए शास्त्रकारों ने मानव–जीवन का क्रम–विभाजन इस सुन्दर–ढंग से किया है कि मनुष्य जन्म का आनन्द भी परिपूर्ण मात्रा में मिलता रहे और ईश्वरीय प्रयोजन की उपेक्षा करने एव ऋण भार से लदकर भविष्य को अन्धकारमय बनाने का अवसर भी न आये । यह व्यवस्था पूर्वार्द्ध–उत्तरार्द्ध के विशेष कार्यक्रमों के रूप में हमारे सामने है । चार आश्रमों में ब्रह्मचर्याश्रम और गृहस्थाश्रम जन सहयोग का लाभ लेकर अधिक सशक्त बनने और उपलब्धियों का भौतिक आनन्द लेने के लिए हैं । यद्यपि इनमें भी साथ–साथ प्रत्युपकार करते रहने का विधान है, पर उत्तरार्द्ध को तो ऋण चुकाने के परमार्थ में लगाना ही आवश्यक माना जाता है । यदि सौ वर्ष की आयु मानी जाती

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है तो पचास वर्ष बाद उत्तरार्द्ध प्रारम्भ हो जाता है । यद्यपि आजकल सौ वर्ष कोई बिरला ही जीता है, बहुधा सत्तर–अस्सी तक भी कम ही पहुँच पाते हैं । इस दृष्टि से तो उत्तरार्द्ध और भी जल्दी, चालीस से ही आरंभ हो जाना चाहिए, पर चूँकि पूर्वकालीन व्यवस्था को भी अपने लाभ की दृष्टि से ठीक माना जाय तो भी पचास वर्ष के बाद आरम्भ होने वाला जीवन काल ऋण चुकाने की दृष्टि से किए जाने के लिए है । इसी अवधि में वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम आते हैं । उनकी उपयोगिता एवं आवश्यकता भी वैसी ही है, जैसे जीवन के पूर्वार्द्ध में विद्या पढ़ने, विवाह करने और पैसा कमाने की ।

देखा जाता है कि जो विद्या नहीं पढ़ते, गृहस्थ नहीं जमा पाते या रोटी नहीं कमा पाते उनसे लोग घृणा करते हैं और उसे असफल मानते हैं किन्तु आश्चर्य यह है कि उत्तरार्द्ध के लिए जो जीवन–क्रम निर्धारित है उसकी उपेक्षा करने वालों को घृणा एवं तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देखा जाता । होना यही चाहिए कि जिस प्रकार स्कूल जाने से कतराने वाले किशोर को हर कोई धमकाता है और रोटी न कमाने वाले प्रौढ़ की आवारागर्दी की भर्त्सना करता है, उसी प्रकार पचास वर्ष का हो जाने पर भी वानप्रस्थ ग्रहण न करने और समाज का ऋण चुकाने में तत्पर न होने का प्रमाद बरतता है उसकी भी सर्वत्र निन्दा एवं भर्त्सना की जाय । यह अवसर होते हुए भी जो ऋण नहीं चुकाता कर्ज मारकर भागने की नीयत रखता है वह अनैतिकता अपनाने वाला व्यक्ति लोगों की दृष्टि में गिरा हुआ रहता है, उसी प्रकार पचास वर्ष का होने पर भी सेवा–धर्म को अपनाने के वानप्रस्थ कर्तव्य को जो शिरोधार्य नहीं करता, वह लोक–निन्दा, सामूहिक घृणा एवं सामाजिक तिरस्कार का भागी होना चाहिए । अच्छा हो ऐसे लोगों को एक सामाजिक अपराधी घोषित कर उनका तिरस्कारपूर्ण बहिष्कार आरम्भ कर दिया जाय । बिरादरियों की पंचायतें किसी जातीय नियम तोड़ने वाले को जाति बाहर कराने आदि के दण्ड दिया करती हैं । क्या ही अच्छा होता उन लोगों को भी ऐसा ही दण्ड मिलता जो गृहस्थ के संचालन भार से मुक्त होने पर भी वासना, तृष्णा की सड़ी हुई कीचड़ में कुल–बुलाने वाले कीड़े बने रहना चाहते हैं ।

उनसे जो पचास के हो चलें) (९

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जीवन का समुचित विभाजन–भारतीय धर्म में आश्रम व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है । जीवन को चार भागों में बहुत सोच–समझकर दूरदर्शितापूर्ण सूझबूझ के साथ विभाजित किया गया । प्रथम चौथाई जीवन यदि विद्या प्राप्ति, स्वास्थ्य संवर्धन, अनुभव, संचय, सद्गुणों के अनुशीलन में न लगाया जाय तो जीवन की इमारत किस पर खड़ी होगी ? नींव ही मजबूत न होगी तो दीवार का अस्तित्व कब तक रहेगा ? चौथाई आयु जीवन की नींव भरने में, अध्ययन आदि में लगाने के बाद एक चौथाई आयु परिवार संस्था के संचालन में व्यतीत की जानी चाहिए ताकि संसार की भौतिक प्रगति एवं समृद्धि का व्यवस्था क्रम यथावत् चलता रहे । उपयोगी परिवार संस्था का तारतम्य न टूटे । भावी पीढ़ियों का निर्माण होता विधिवत् रहे और इन्द्रियजन्य तथा कामना जन्य भौतिक आकांक्षाऐं भी तृप्त होती रहें । यह प्रयोजन गृहस्थ से ही पूरे होते हैं । अब दान–पुण्य का नम्बर आया, जैसे ही बड़ी संतान गृहस्थ का बोझ सम्भालने लायक हो जाय, वैसे ही उसके ऊपर पारिवारिक उत्तरदायित्वों को धीरे–धीरे सौंपते रहना चाहिए और अपनी उँगली पत्थर के नीचे से निकालते चलना चाहिए । विश्वास हो जाय कि बड़े बच्चे ने घर संभाल लिया तो फिर प्रायः सारा ही समय सामाजिक ऋण चुकाने में लग जाना चाहिए । यही वानप्रस्थ का प्रयोजन है ।

मनुष्य जाति की नैतिक, मानसिक, सामाजिक प्रगति की पूरी सम्भावना वानप्रस्थ आश्रम पर निर्भर है । समाज का आध्यात्मिक एवं धार्मिक विकास इसी आश्रम की सफलता एवं सुव्यवस्था पर टिका हुआ है । लोक शिक्षण के लिए अनुभवी, चरित्रवान् एवं निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता चाहिए । वे कहाँ से मिलें ? अल्प आयु के नव–युवकों में उत्साह एवं शारीरिक चेतना तो होती है, पर अन्य कई त्रुटियाँ उनमें रहती हैं । अतृप्त इच्छाऐं उन्हें काम और लोभ की ओर खींच ले जाती हैं, फलतः कितने ही लोकसेवी नवयुवक इस फिसलन में अपना चरित्र खोते देखे गये हैं । यह कमी राजनीति के नेतृत्व में तो किसी प्रकार खप सकती है, पर सामाजिक एवं नैतिक क्षेत्र में सेवा–कार्य, नेतृत्व कराने वाले के लिए उसकी मौत का कारण बन जाती हैं । फिर नई उम्र के कार्यकर्त्ता पर यदि गृहस्थ की जिम्मेदारियाँ लदी होंगी तो उसे वेतन लेना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पड़ेगा । वेतन–भोगी कार्यकर्त्ता अपना सम्मान खो बैठते हैं, जिसका सम्मान नहीं उसका प्रभाव भी कहाँ पड़ता है ? इसलिए नई आयु के सामाजिक कार्यकर्त्ता अपने दैनिक जीवन में थोड़ा समय निकाल कर सामाजिक कार्यों में थोड़ा योगदान तो दे सकते हैं, पर पूरा समय लगा सकना उन्हीं के लिए सम्भव होता है, जो आर्थिक दृष्टि से आत्म–निर्भर हैं और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ बड़े लड़के के कन्धों पर चले जाने से अवकाश भी जिनके पास है । ऐसे लोग ही पूरे मन और पूरे श्रम के साथ सार्वजनिक प्रवृत्तियों के अभिवर्धन में जुट सकते हैं । वानप्रस्थ इसी आवश्यकता को पूर्ण करता है ।

धार्मिक नेतृत्व का उत्तरदायित्व–जन समाज की सद्भावना एवं सत्प्रवृत्तियों को जागृत रखने के लिए जिन उज्ज्वल व्यक्तियों का नेतृत्व एवं कर्तृत्व आवश्यक है, वे प्रायः वानप्रस्थ आश्रम में से ही मिलते हैं । वे न मिलें तो सार्वजनिक एवं सामूहिक रचनात्मक प्रयत्नों का गतिशील रहना कठिन हो जाय । अवकाश, अनुभव, सद्भाव और सत्प्रयोजनों के सम्मिश्रण से वानप्रस्थ जन जागरण की महती आवश्यकता को पूर्ण करता है और प्राचीन काल में समस्त शिक्षण संस्थाओं को वानप्रस्थ लोग ही चलाते थे, कथा–प्रवचनों के माध्यम से लोक मानस को सुसन्तुलित रखते थे, रचनात्मक प्रवृत्तियों का संचालन करते थे । सम्मेलन–सत्र, धर्मानुष्ठान एवं विचार गोष्ठियों की व्यवस्था करते एवं घर–घर जाकर सन्मार्ग का पथ–प्रदर्शन करते थे । जहाँ भी अनीति व्यवस्था एवं अविद्या को पनपते देखते वहाँ उसका विरोध करने डट जाते थे । इस प्रकार साधु–ब्राह्मणों की एक बड़ी आवश्यकता यही आश्रम पूरी करता था । समाज को तपे हुए अनुभवी और निस्वार्थ पथ–प्रदर्शक प्रदान करते थे । इस प्रकार साधु–ब्राह्मणों की एक बड़ी आवश्यकता यही आश्रम पूरी करता था । समाज को तपे हुए, अनुभवी और निस्वार्थ पथ–प्रदार्शक प्रचुर मात्रा में मिलते रहते थे । उसी दशा में उसका सबल, समृद्ध, सुसंस्कृत एवं सुविकसित रहना स्वाभाविक ही था । भारतीय समाज की संसार भर में जो श्रेष्ठता मानी जाती रही है, उसमें वानप्रस्थों को महत्वपूर्ण योगदान रहा है । ब्राह्मणों के दो वर्ग हैं–एक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जन्मजन्य दूसरे कर्मजन्य । जन्मजन्य ब्राह्मणों में समुचित संस्कार के अभाव में दोष रह सकते हैं, पर जिसने ढलती आयु में, संसार के अनुभवों से तृप्त होकर लोक–मंगल के लिए अपना जीवन समर्पित किया है, उसके फिसलने की संभावना कम ही रहती है । अनुभवी और क्रमबद्ध वानप्रस्थ, फिर वे किसी भी वर्ण में क्यों न जन्मे हों, एक सच्चे ब्राह्मण, एक सच्चे साधु की ही आवश्यकता पूर्ण करते हैं । कर्मजन्य ब्राह्मणों की उपयोगिता और भी अधिक असंदिग्ध रहती है । ऐसे देवपुरुष जिस देश में बढ़ेंगे उसका सब प्रकार कल्याण ही कल्याण होगा ।

आज की परिस्थितियों में ऐसे लोक–नेताओं की अत्यधिक आवश्यकता है । गन्दगी ज्यादा फैली हो तो सफाई करने वाले भी अधिक ही चाहिए । संक्रामक बीमारियों का प्रकोप हो रहा हो, तो चिकित्सक एव परिचर्याकर्त्ताओं की भी आवकश्यकता बहुत होगी । भयंकर अग्निकाण्ड का दावानल धधक रहा हो तो उसे बुझाने वाले स्वयं सेवक भी अधिक चाहिए । शत्रुओं की प्रबल सेना का मुकाबला करने के लिए रक्षाबल की संख्या भी अधिक ही होनी चाहिए । इन दिनों ऐसी ही परिस्थितियाँ हैं । नैतिक–सामाजिक, आर्थिक–बौद्धिक, शारीरिक–मानसिक हर दृष्टि से अपना देश पिछड़ गया है । उसे संभालने, सुधारने एवं उठाने के लिए सबल, समर्थ एवं प्रतिभा सम्पन्न वानप्रस्थों की जितनी अधिक आवश्यकता है उतनी और किसी की नहीं । समाज को खोखला करने में लगी हुई कुरीतियों, अन्ध–परम्पराओं, मूढ़–मान्यताओं एवं अनैतिक आकांक्षाओं से तेजस्वी वानप्रस्थों के अतिरिक्त और कौन लड़ेगा ? असंगठित, अवसादग्रस्त, गुण–कर्म–स्वभाव की मलीनता से आक्रान्त जनता का उद्धार कौन करेगा ? अकर्मण्यता, विलासिता और भौतिकता की मूर्छा में पड़े हुए इस राष्ट्र–लक्ष्मण को संजीवन बूटी लाकर वानप्रस्थ हनुमान के बिना और कौन पुनर्जीवित करेगा । आज आड़े समय में मातृभूमि की पुकार योगी एवं वानप्रस्थों के लिए है, आगे बढ़कर आयें और अपनी जिम्मेदारियाँ संभालें तो कायाकल्प होते देर न लगे । आज के दुर्दिन कल ही स्वर्णिम सौभाग्य के रूप में परिणत होते हुए दृष्टिगोचर होने लगें ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सम्मिलित परिवार का स्वर्णिम सूत्र–सम्मिलित परिवारों की सुन्दर सुव्यवस्थित परम्परा तब चले जब वानप्रस्थ ग्रहण करने के लिए जन–साधारण में उत्साह पैदा हो । बड़े लड़के अपनी बहिन–भाइयों को भी अपने कर्तव्य, उत्तरदायित्व में सम्मिलित रखें तो आज जो आपापूती की संकीर्णता घर करती जा रही है, वह न पनपे । आज तो परिवार में जो भी कमाऊ होता जाता है, अपनी पत्नी को लेकर अलग ही बैठताा है, जो कमाता है अपने और अपनी पत्नी के शौक–मौज में ही लगाता है । बहिन–भाइयों, माता–पिता आदि की चिन्ता ही नहीं करता । वह जानता है कि बूढ़ा बाप किसी तरह घर की गाड़ी धकेलता रहेगा । हम क्यों इस झंझट में पड़ें, पर जब उसे यह विदित होगा कि पिताजी अपने कर्तव्यों की पूर्ति के लिए वानप्रस्थ लेंगे और उसे परिवार का उत्तरदायित्व संभालना होगा, तो वह दूसरी बात सोचेगा और लोक निन्दा से बचने के लिए उदार दृष्टिकोण अपनावेगा । यही वृत्ति अन्य लड़कों में भी पनपेगी । दूसरा लड़का बड़ा होगा तो वह भी बड़े भाई का अनुकरण करेगा और छोटे भाई–बहिनों के विकास–निर्माण में हाथ बँटावेगा । इस प्रकार परिवारों में उदार–परम्परा बनी रहेगी । उन बच्चों के बच्चे भी इसी प्रकार सोचेंगे और करेंगे । आज तो बाप को भी जब बुढ़ापे तक तृष्णा–वासना से छुटकारा नहीं तो बेटे भी उसका अनुकरण क्यों न करेंगे ? वर्तमान परम्परा के अनुसार छोटे बच्चों की व्यवस्था पूरी करने तक पिता को गृहस्थ ही सम्भालते रहना पड़ता है । जब वानप्रस्थ की बात ध्यान में होगी तो कम बच्चे पैदा करने और उनकी जिम्मेदारियों से जल्दी निवृत्त होने की बात भी सोचेगा । बुढ़ापे में सन्तान पैदा न करेगा । यह बात मन में रहे तो समाज का अनेक दृष्टियों में हित–साधम ही होगा । परिवारों में उत्कृष्टता एवं आदर्शवादिता का वातावरण रहने लगेगा । बुढ़ापे तक सन्तानोत्पादन की प्रक्रिया जारी रहने पर बच्चे अशक्त उत्पन्न होते हैं और ढलती आयु के लोगों का शरीर भी ब्रह्मचर्य के अभाव से जर्जर एवं अनेक रोगों से ग्रसित बना रहता है । यदि ब्रह्मचर्य मिश्रित वानप्रस्थ का उपक्रम फिर पूर्ववत् चल पड़े तो ब्रह्मचर्य से होने वाले लाभों का प्रतिफल स्त्रियों, पुरुषों, बच्चों सभी को मिले और दुर्बलता एवं रुग्णता का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

वातावरण सबलता एवं सार्थकता में परिणत होने लगे ।

आज की परिस्थिति का आदर्श–सन्यास–वानप्रस्थ परम्परा पहले घर छोड़कर वन में रहने की भले ही रही हो, पर आज की परिस्थितियों में वैसी ही आवश्यकता नहीं रही । न तो अब प्राचीनकाल जैसे वन रहे न उनमें ऐसे कन्द–मूल फल होते हैं, जिनसे हर ऋतु में आनन्दपूर्वक गुजारा हो सके । जंगलों में रहने वाले साधु लोग भी अन्नाहार ही करते हैं और वह भी उन्हें गृहस्थों से ही जुटाना पड़ता है । आज लोगों की कमाई शुद्ध नहीं रही । अनीतिपूर्वक कमाया हुआ अन्न खाकर कोई व्यक्ति अपनी प्रवृत्तियाँ सावधान नहीं रख सकता । भिक्षा जीवी सन्त–महात्माओं को आलस्य एवं अवसाद घेरे रहता है, मन में कुमार्ग दौड़ता है, भजन में मन नहीं लगता क्योंकि जिस दान से उनका रक्त और मन बनता है, वह सात्विक नहीं होता । अन्यायोपार्जित धन जहाँ जाता है, वहीं गड़बड़ी फैलाता है । इसलिए अब न साधु को, न वानप्रस्थ को, किसी को भी जहाँ तक सम्भव हो भिक्षा–जीवी नहीं होना चाहिए । इस दृष्टि से गुजारे का प्रबन्ध अपने घर से ही रखना चाहिए । जिन्हें आजीविका की हानि से पूर्ण स्वावलम्बन प्राप्त नहीं है, आधा समय उपार्जन के लिए और आधा समय लोक सेवा के लिए लगाकर भी इस व्रत का पालन कर सकते हैं । रोटी, कपड़े का प्रबन्ध घर में रखना चाहिए । इसके बदले दोपहर तक आधा दिन परिवार की देखभाल की व्यवस्था में लगाना चाहिए । वैसे भी जिस घर में रहना होता है, उसकी व्यवस्था की देखभाल करना, मार्ग–दर्शन करना, परामर्श देना और सँभालना–सुधारना मानवोचित–कर्तव्य है । जब दूसरों के सुधारने एवं सेवा करने का कार्यक्रम बनाया है तो अपने घर वालों को उस सेवा–लाभ से विमुख क्यों रखा जाय ? घर छोड़ने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है । इसी घर में रहना चाहिए, हाँ मोह–ममता, के बन्धन तोड़ देने चाहिए । अपने घर वालों को भी जनता मात्र मानकर इसकी यथोचित सेवा करते रहना चाहिए ।

यह मोह–बन्धन शिथिल करने इसलिए आवश्यक है कि आत्मीयता की छोटी सीमा का बन्धन तोड़कर व्यापक क्षेत्र में विस्तृत हो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सके और सेवा धर्म पूरे मनोयोग के साथ पालन किया जाता रहे । अगले जन्मों की उत्तम गति भी मोह बन्धन तोड़ने से ही होती है, अन्यथा जीव लौटकर फिर घर के ही समीप अपनी वासना के द्वारा खिंचा चला आता है । मोहग्रस्त की मुक्ति नहीं हो सकती । सीमित दायरे में अपने को बाँधे रखने वाला असीमितता का, आध्यात्मिकता का आनन्द नहीं ले सकता । अतएव वानप्रस्थ को ममता–त्याग के लिए कहा गया है । घर की एक कोठरी अलग से अपने लिए ले लेनी चाहिए या खेत, बगीचे में एक झोंपड़ी बनाकर रहने लगना चाहिए । अकेला रहना, अपनी कोठरी को ही अपना एकान्त तपोवन मान लेना वानप्रस्थ आश्रम के उपयुक्त है । पत्नी का यदि बच्चों में लगाव हो तो उसका इन्हीं के साथ रहना उचित है, पर यदि वह भी आत्म–कल्याण के लिए लोकसेवा का व्रत धारण करे तो दो साथी साधुओं की तरह वह भी पति के साथ रह सकती है । पत्नी को त्यागने की आवश्यकता नहीं है, पर शरीर–आसक्ति को त्याग देना चाहिए । उसे स्वामी नहीं वरन् छोटा भाई मानना चाहिए ।

वानप्रस्थ संस्कार विवेचन

जन्म और मरण की अवधि में दो बार सञ्चय काल और दो बार उपयोग काल आता है । बालकपन और बुढ़ापा सञ्चय काल हैं और यौवन तथा परलोक–भोग उपयोग काल हैं । सञ्चय की अवधि में जो इकट्ठा कर लिया जाता है, उपभोग–काल में उसी का आनन्द उपलब्ध होता है । बचपन में विद्याध्ययन एवं व्यायाम आदि के द्वारा जो शारीरिक, मानसिक बल उपार्जित कर लिया जाता है, उसी का सत् परिणाम यौवन काल में वैभव एवं आनन्द के रूप में उपभोग करने को मिलता है ।

जिन्होंने बचपन में परिश्रमपूर्वक पढ़ाई जारी रखी, उच्च शिक्षा प्राप्त की, अच्छी श्रेणी में उत्तीर्ण हुए कला–कौशल सीखी, वे अपने उस अध्ययन–तप का लाभ युवावस्था में उठाते हैं । उनकी बौद्धिक क्षमता बढ़ी–चढ़ी होने के कारण अच्छा व्यवसाय, अच्छी नौकरी, अच्छा काम

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मिल जाता है । अच्छी आमदनी होती है । प्रतिष्ठा का पद मिलता है इन उपलब्धियों के फलस्वरूप वे शोक–मौज के, ऐश–आराम के, गौरव–सम्मान के अनेकानेक साधन जुटा लेते हैं । स्वयं मौज में रहते हैं, अपने घर वालों को मौज में रखते हैं और दूसरों का भी बहुत कुछ भला कर देते हैं ।

इसी प्रकार जिनने व्यायाम, ब्रह्मचर्य, आहार–विहार के संयम द्वारा अपना स्वास्थ्य बना लिया वे सदा निरोग रहते हैं, बहुत दिन जीते हैं, परिपुष्ट रहने से यौवन में इन्द्रिय सुख भी भोगते हैं । अच्छी नींद सोते और हँसी–खुशी के दिन बिताते हैं । पुष्ट शरीर से काम भी खूब होता है और विरोधी भी डरते रहते हैं । जो खाते हैं, पच जाता है । बीमारियों की व्यथायें नहीं सहनी पड़तीं, सन्तानें स्वस्थ होती हैं और दवा–दारू का खर्च नहीं करना पड़ता । तात्पर्य यह है कि जिसने बचपन में स्वस्थ बनने की तपश्चर्या कर ली, वह उसका लाभ जवानी में उठाता है । बचपन और कुछ नहीं, यौवन को जैसा भी कुछ बनाना हो, उसकी तैयारी का समय है । किसी को डाक्टर, इन्जीनियर, वैज्ञानिक, प्रोफेसर, अफसर, पहलवान आदि जो कुछ महत्व प्राप्त करना हो उसकी तैयारी का तप बचपन में ही करना होता है । जो लोग उस तैयारी की अवधि आलस्य, प्रमाद और उच्छृंखलता में बिता देते हैं, उन्हें उसका दुष्परिणाम युवावस्था में भोगना पड़ता है ।

जिन लड़कों ने बचपन में पढ़ने से जी चुराया है, वे बड़े होने पर बिना पढ़े–गँवार बने रहे और आजीविका, पद तथा सामाजिक सम्मान की दृष्टि से गये–गुजरे स्तर पर पड़े रहने के लिए विवश, हुए, कोई अच्छा काम न पा सके, उच्चस्तरीय लोगों के बीच सिर उठाकर बैठ सकने की स्थिति न रही । इसी प्रकार जिनने व्यायाम न किया, आहार–विहार, में असंयम वरता, ब्रह्मचर्य तोड़ा उनको जवानी आने से पूर्व ही बुढ़ापे ने घर दबाया । तरह–तरह की बीमारियों के शिकार बने रहे । देह से कुछ महत्वपूर्ण काम न हो सका । दवा–दारू में पैसा उड़ता रहा, देह कष्ट पाती रही, इन्द्रिय सुख भोगने का सौभाग्य ही न मिला, सन्तानें दुबली हुईं, अल्प अवधि में ही काल–कवलित हो गईं, जब

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तक जिए तब तक भी दूसरे उपहास, उपेक्षा अथवा तिरस्कार की दृष्टि से देखते और घृणा भरा व्यवहार करते रहे । बलवान शत्रुओं ने सताने में कमी न छोड़ी । अपनी दुर्बलता अपने को ही डराती एवं परेशान करती रही । बचपन में शरीर बल संचय के कर्तव्य की जो उपेक्षा की गई थी उसका दण्ड यौवन में भुगता ही जाना था, भुगतना भी पड़ा । संयचकाल की बर्बादी उपभोगकाल में विपत्ति बनकर सामने आती है, यह एक सुनिश्चित तथ्य है ।

जिन्हें यौवन काल समुचित स्थिति में व्यतीत करने की महत्वाकांक्षा हो, उन्हें बचपन एवं किशोर अवस्था में उसके लिए आवश्यक तप करना ही होता है । इसके बिना और कोई रास्ता युवावस्था को शानदार बनाने का है नहीं । अपवाद की बात दूसरी है, छप्पर फाड़कर किसी को दौलत मिले तो यह उसका पूर्व संचित भाग्य ही कहा जायगा, पर आमतौर से ऐसा होता नहीं, होता यही है कि जो किया जाता है, उसका फल मिलता है । इसलिए क्या अभिभावक, क्या अध्यापक, क्या शुभचिन्तक, क्या अच्छे मित्र सभी किशोर और नवयुवकों को यही नेक सलाह देते हैं कि वे पूरी मेहनत, एकाग्रता और दिलचस्पी से अपने बौद्धिक एवं शारीरिक विकास में लगे रहें । जो लड़के इस सलाह को मान लेते हैं वे आगे चलकर सुख पाते हैं । जो इन परामर्शों पर कान नहीं धरते उन्हें समय आने पर उस उपेक्षा का बेतरह पश्चात्ताप करना पड़ता है ।

दृश्य यौवन की तरह एक अदृश्य यौवन भी है । स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म की शक्ति एवं महत्ता कहीं अधिक होती है । स्थूल शरीर की तुलना अधिक सामर्थ्यवान है । शरीर बल की तुलना में बुद्धिबल का उपयोग अधिक है । ठीक उसी प्रकार मरणोत्तर का महत्व इस दृश्य यौवन की अपेक्षा हजारों–लाखों गुना अधिक है । दीखने वाली जवानी दस–बीस वर्ष ठहरती है, पर मरने के बाद स्वर्ग–नरक की अवधि उसकी तुलना में बहुत अधिक लम्बी होती है । उसमें मिलने वाले सुख एवं दुखों का स्तर भी जवानी में मिलने वाली थोड़ी–सी सुविधा–असुविधाओं की तुलना में कहीं अधिक गहरा है । स्वर्ग में जो आनन्द

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है, वह सांसारिक पदार्थों में कहाँ ? नरक में जो व्यथा–वेदना है, स्थूल जगत उसका हजारवां अंश भी नहीं । यहाँ तो सुख–दुख बटाने वाले भी कई मिल जाते हैं, पर वहाँ तो सब कुछ अकेले ही सहना पड़ता है । यौवन उसे कहते हैं जिसमें शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित हों । सांसारिक जीवन में हमारी अन्तःचेतना बहुत करके प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती है । इन्द्रिय–लिप्सा एवं सांसारिक आकर्षण एवं मानसिक भ्रम–जंजाल उसे दबाये बैठे रहते हैं, पर मरणोत्तर काल में वे सभी हट जाते हैं और अन्तःचेतना अपने प्रौढ़ रूप में विकसित होती है । तब उसके सुख–दुख की अनुभूतियाँ भी तीव्र हो जाती हैं ।

स्वर्ग–नरक के सुख–दुःखों का स्तर इसलिए इस संसार की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ा–चढ़ा होता है । नये जन्म की सारी भूमिका भी इसी मरणोत्तर यौवन में बन जाती है । जिस प्रकार युवावस्था में जैसा होता है वैसा ही सन्तान का भी स्वास्थ्य होता है । ठीक इसी प्रकार प्राणी को मरणोत्तर काल में जैसी संवेदनायें भुगतनी पड़ती हैं, ठीक उसी स्तर का पुनर्जन्म भी होता है । नरक भोगने वाले प्राणी संसार में उतरते हैं तो उन्हें नीच योनियों में कष्टकारक परिस्थितियों में जन्मना पड़ता है और जो स्वर्ग से आते हैं वे अपनी आत्मिक स्थिति के अनुरूप उत्कृष्ट स्तर के वातावरण में जन्मते और महत्वपूर्ण जीवन–यापन करते हैं ।

उच्चस्तरीय सुख के लिए उच्चस्तरीय तप–इस मरणोत्तर जीवन को सुखी एवं समुन्नत स्तर का बनाने के लिए बुढ़ापे में तैयारी करनी पड़ती है । जिस प्रकार बचपन की सीमा रेखा से यौवन जुड़ा हुआ है, उसी प्रकार बुढ़ापे की सीमा रेखा से मरणोत्तर यौवन जुड़ा हुआ है । इसलिए उस सूक्ष्म, अदृश्य किन्तु महान यौवन की तैयारी भी ठीक इन्हीं दिनों करनी पड़ती है । जिन्होंने अपनी ढलती आयु का ठीक उपयोग कर लिया, उनने मरणोत्तर यौवन को सुव्यवस्थित बनाने की योजना बना ली, किन्तु जो उस महत्वपूर्ण अवधि को आलस्य, प्रमाद और माया मोह में गँवाते रहे उनका महान मरणोत्तर यौवन उसी प्रकार अन्धकारमय बनता है जैसा कि उच्छृंखल और आवारा बच्चों का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सांसारिक जीवन अस्त–व्यस्त रहता है । कितने ही बेवकूफ लड़के अपनी ढीठता में इतने ग्रसित होते हैं कि भावी जीवन के बिगड़ने की बात में उन्हें कोई सार दिखाई नहीं देता । उसी तरह कितने ही बूढ़े ऐसे अदूरदर्शी होते हैं कि वे अजर–अमर बने रहने पर विश्वास करते हैं और मरणोत्तर यौवन की समस्याओं को फूटी आँख से भी नहीं सोचना चाहते । उस सम्बन्ध में सोचने की उन्हें फुरसत ही नहीं मिलती । नाती–पोतों की ममता उन्हें छोड़ती ही नहीं । जो कमाना, जो करना, जो सोचना सो सब बेटे–पोतों के लिए ही । इस प्रकार के मूढ़ताग्रस्त बुड्ढे फिर चाहे वे पढ़े–लिखे हों या अनपढ़ सच्चे अर्थों में मूढ़मति कहे जायेंगे । आज हमारा समाज उच्छृंखल लड़कों और अदूरदर्शी मन्द मति बूढ़ों से भरा पड़ा है । फलस्वरूप हम प्राचीन गौरव गरिमा से दिन–दिन नीचे गिरते हुए पतन के गहरे गर्त में गिरते चले जा रहे हैं ।

इस स्थिति को बदलना ही होगा । नव निर्माण की, युग परिवर्तन की समस्या इसी प्रकार हल होगी । बालकों में अनुशासन संयम, परिश्रम एवं शिष्टाचार की भावनाऐं विकसित करके उन्हें सांसारिक प्रगति में योगदान कर सकने योग्य बनाना आवश्यक है । उसी प्रकार वयोवृद्धों को कहना होगा कि वे मरणोत्तर जीवन को समुन्नत बनाने की तैयारी में लग जायें । यह तैयारी दुहरे लाभ की है । उनका निज का परलोक स्वर्गीय सुख–शान्ति से परिपूर्ण होगा, पुनर्जन्म की महती सम्भावना रहेगी एवं मुक्ति का आनन्द मिलेगा । साथ ही इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए जो साधना करनी पड़ेगी, वह संसार में सर्वतोमुखी सद्भावना उत्पन्न करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध होगी । वे करेंगे तो अपने आत्म–कल्याण का कार्य पर उसके फलस्वरूप विश्व शान्ति में जो योगदान मिलेगा वह लोक–कल्याण की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जायगा । इसलिए दूरदर्शी महर्षियों ने भारतीय जीवन के अन्तिम अध्याय को जिस प्रकार व्यतीत करने की परम्परा बनाई है, उसमें दुहरा लाभ है । वृद्ध पुरुष अपना परलोक तो सुधारते ही हैं साथ ही संसार की भी इतनी बड़ी सेवा करते हैं कि इस लोक में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

स्वर्ग के अवतरण का मनोरम दृश्य दिखाई देने लगता है । जन साधारण को उनके इस तप से गुलाब या चन्दन की सुगन्धि की तरह अनायास ही महत्वपूर्ण लाभ मिलता है ।

ढलती उम्र का तकाजा है–वानप्रस्थ–पारिवारिक जिम्मेदारियाँ जैसे ही हलकी होने लगें, घर को चलाने के लिए बड़े बच्चे समर्थ होने लगें ओर अपने छोटे भाई–बहिनों की देखभाल करने लगें, तब वयोवृद्ध व्यक्तियों का एक मात्र कर्तव्य यही रह जाता है कि वे पारिवारिक जिम्मेदारियों से धीरे–धीरे हाथ खींचें और क्रमशः वह भार समर्थ लड़कों पर बढ़ाते चलें । ममता को परिवार की ओर शिथिल कर समाज की ओर विकसित करते चलें । सारा समय घर के लोगों के लिए ही खर्च न कर दें वरन् उसका कुछ अंश क्रमशः अधिक बढ़ाते हुए समाज के लिए समर्पित करते चलें ।

घर छोड़कर एकान्त कुटी में जा बैठना और भजन के नाम पर निष्क्रिय जीवन बिताने लगना आजकल लोगों ने भक्ति या वैराग्य का रूप मान लिया है । इसी दृष्टि से कई आध्यात्मवादी व्यक्ति तीर्थों में, नदियों के किनारे एकान्त कोठरियों में जा बैठने को ही बड़ा आध्यात्मिक पुरुषार्थ मान बैठते हैं, यह धारणा अज्ञानान्धकार युग के निराशावादी और अकर्मण्य लोगों ने फैलाई जिसके फलस्वरूप आज ८० लाख व्यक्ति धर्म के नाम पर निष्क्रिय, अनुपयोगी जीवन बिताते हुए भिक्षुक बने हुए जनता पर भार बनकर जी रहे हैं । यह विडम्बना न अध्यात्म है, न धर्म, न योग है, न वैराग्य । न उससे व्यक्ति का भला होता है और न समाज का । प्राचीनकाल का वैराग्य रचनात्मक वैराग्य था, जिसमें व्यक्ति के कल्याण तथा समाज के उत्कर्ष का उभय पक्षीय कार्यक्रम समान रूप से सन्निहित थे । बुढ़ापे को वानप्रस्थ के लिए समर्पित करने का जो शास्त्रीय विधान है । उसका स्वरूप यह है कि (१) उपासना (२) स्वाध्याय, (३) संयम, (४) सेवा, इन चार कार्यक्रमों में अपनी शक्तियों को सुव्यवस्थित रीति से संलग्न किया जाय । वृद्धों को उचित है कि घर–परिवार से अपना समय और मन जिस अनुपात में बचावें, उसे उसी अनुपात से इन चार कार्यों में संलग्न करते चलें ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

वानप्रस्थ का अर्थ घर छोड़कर किसी दूर देश में चले जाना कदापि नहीं । घर से सम्पर्क शिथिल हो, पारिवारिक ममता घटे, इस दृष्टि से घर में एक अलग कमरा लेकर रहने लगना और यह सोचना कि मैं छात्रावास निरीक्षक की तरह इस परिवार का मार्गदर्शक तो हूँ, पर इनसे बँधा हुआ नहीं, वरन् मेरा जीवन समाज की सम्पत्ति है, वास्तविक वानप्रस्थ है । जहाँ तक सम्भव हो, परिवार की स्थिति यदि उपयुक्त है तो निर्वाह खर्च घर से ही लेना चाहिए । जिनकी पेन्शन है या जिनकी पूर्व संचित सम्पत्ति, कृषि आदि है वे उसका उपयोग अपने निर्वाह में भी करें तो यह न्यायोचित है । यह जरूरी नहीं कि अपनी उपार्जित अब तक की सारी सम्पदा परिवार को ही दे दी जाय और खुद भिक्षुक बनकर दूसरों की रोटी पर जिया जाय । आजकल दूसरों का धान्य कुधान्य ही है । उसे खाने से आत्मिक विकास में सहायता नहीं मिलती वरन् बाधा ही पड़ती है । इसलिए सेवा कार्य में संलग्न स्थिति में कहीं अवसर आने पर किसी के यहाँ रोटी खाली यह बात दूसरी है, साधारणतया गुजारा अपने बलबूते पर ही करना चाहिए । यदि पारिवारिक स्थिति ठीक न हो तो कुछ समय परिश्रम करके गुजारे की व्यवस्था निकाल ले और बाकी समय अपने आध्यात्मिक कार्यक्रमों में लगावें ।

कार्य पद्धति की रूपरेखा—किसी जमाने में वानप्रस्थ लोग वनों में रहते थे । उस जमाने में वनों में कन्दमूल फल इतने अधिक थे कि जीवन निर्वाह की व्यवस्था गाँव, नगरों की अपेक्षा कहीं अधिक सरलता से हो जाती थी । अब कहीं ऐसा जंगल नहीं रहा, इसलिए निर्वाह की सुविधा गाँव—नगरों के माध्यम से ही जुटानी पड़ती है । अतएव निवास का प्रबन्ध भी वैसा ही करना उचित है । प्राचीनकाल में वानप्रस्थी पीत वस्त्र धारण करके ऋषियों के गुरुकुलों में छात्रों की तरह ही स्वाध्याय करते थे । बच्चों की पढ़ाई में और बूढ़ों की पढ़ाई में अन्तर तो होता है, पर रीति एक ही है । वानप्रस्थों को अपना मानसिक विकास करने के लिए स्वाध्याय की अनिवार्य आवश्यकता रहती है । प्राचीनकाल में वानप्रस्थ संयम की दृष्टि से ब्रह्मचर्य और आहार के सम्बन्ध में पूरी कड़ाई बरतते थे । आज की परिस्थिति में इतनी ढील रखी जा सकती है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कि इन्द्रियों का संयम अधिकाधिक सावधानी से किया जाय, पर ऐसा कोई व्रत न लिया जाय जो टूट जाय तो आत्मग्लानि में जलना पड़े । उपासना का द्वार गृहस्थ और विरक्त सबके लिए समान रूप से खुला है । गृहस्थी की उपासना बहुत थोड़ी चल पाती है और अनियमित भी हो जाती है, वानप्रस्थ इस सम्बन्ध में अधिक तत्परता बरतें । उनकी साधना संकल्पपूर्वक, नियमित एवं व्यवस्थित चलनी चाहिए । समय भी अपेक्षाकृत अधिक लगाना चाहिए, चौथा काम सेवा का है । वयोवृद्ध वानप्रस्थों को जनमानस का स्तर ऊँचा उठाने, जनता में सद्भावना एवं सत्प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करने के लिए सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप रचनात्मक कार्यक्रम बनाने चाहिए और उन्हें पूरा करने के लिए उसी उत्साह से लगा रहना चाहिए जैसे कि गृहस्थ में धन उपार्जन के लिए तत्परता बरती जाती है । वानप्रस्थ का प्रतीक पीत वस्त्र है । सारे वस्त्र पीले न हों तो एक दुपट्टा या रूमाल पीले रंग का अपने पास एक धार्मिक बर्दी की तरह रखा जा सकता है । उपर्युक्त क्रम में यदि अपना जीवन क्रम ढाल लिया जाय तो समझना चाहिए कि वानप्रस्थ की तैयारी एवं व्यवस्था पूर्ण हो गई ।

उपर्युक्त प्रकार की सुविधा जो जुटा सकते हैं, उन्हें पचास वर्ष की आयु के बाद भी वानप्रस्थ ले लेना चाहिए । जिनके पास पहिले से ही पारिवारिक गुजारे की व्यवस्था बनाने के लिए पैतृक सम्पत्ति मौजूद है, या जिनके बाल-बच्चे हैं ही नहीं वे किसी भी आयु में वानप्रस्थ ले सकते हैं । उन्हें एक ही बात का ध्यान रखना होगा कि वानप्रस्थ के उपरान्त सन्तानोत्पादन न करें ।

आश्रम वानप्रस्थ संस्कार भारतीय धर्म और संस्कृति का प्राण है । जीवन को ठीक प्रकार जीने की समस्या उसी से हल होती है । युवावस्था के कुसंस्कारों का शमन एवं प्रायश्चित इसी साधना द्वारा होता है । जिस देश, धर्म, जाति तथा समाज में उत्पन्न हुए हैं, उनकी सेवा करने का, ऋण-मुक्त होने का अवसर भी इसी स्थिति में मिलता है । इसलिए जिन भी नर-नारियों की स्थिति इसके लिए उपयुक्त हो उन्हें वानप्रस्थ लेना चाहिए । एक प्रतिज्ञा बन्धन में बँध जाने पर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

व्यक्ति अपने जीवन क्रम को तदनुरू प ढालने में अधिक सफल होता है । बिना संस्कार कराये मनोभूमि पर वैसी छाप गहराई तक नहीं पड़ती । इसलिए कदम कभी आगे बढ़ते, कभी पीछे हटते रहते हैं । विवाह न होने तक प्रेमिका का सहचरत्व संदिग्ध रहता है, पर जब विवाह हो गया तो सब कुछ स्थाई एवं सुनिश्चित हो जाता है । संस्कार के बिना पारमार्थिक भावनाओं का उफान कभी शिथिल या समाप्त भी हो सकता है, पर यदि विधिवत् संस्कार कराया गया तो अन्तःप्रेरणा तथा लोक–लज्जा दोनों ही निर्धारित गति–विधि अपनाये रहने की प्रेरणा देती रहेंगी । इसलिए शास्त्र मर्यादा के अनुरूप जिन्हें सुविधा हो वे विधिवत् संस्कार करा लें । जिन्हें सुविधा न हो वे बिना संस्कार के भी उपर्युक्त प्रकार की रीति–नीति अपनाने के लिए यथा सम्भव प्रयत्न करतें रहें ।

सुसंस्कार का सृजन–वृद्धावस्था में जो संस्कार जमते हैं वे ही मरणोत्तर जीवन में साथ जाते हैं, इसलिए इस अवधि में उत्कृष्ट विचारों को मस्तिष्क में भरे रहने और उत्कृष्ट गतिविधियाँ अपनाये रहने का प्रयत्न करना चाहिए । विचार और कर्म दोनों के सम्मिलन से ही संस्कार बनते हैं और यह संस्कार ही प्राणी के साथ जाते हैं । विचारों की उत्कृष्टता अर्जित करने के लिए शास्त्रों का स्वाध्याय नितान्त आवश्यक है । इस अध्ययन की पुष्टि तब होती है, जब उसे दूसरों को भी सुनाया जाय । जिस प्रकार पढ़ने और लिखने की दोनों क्रियायें मिलने पर पढ़ाई का पूरा क्रम बनता है, केवल पढ़ते ही रहें लिखें नहीं तो साक्षरता अधूरी रहेगी । इसी प्रकार स्वाध्याय तो करें पर उसे किसी को सुनावें नहीं तो वह अध्ययन भी ठीक तरह हृदयंगम नहीं हो सकेगा । ज्ञान अर्जन और ज्ञान दान दोनों ही वान्प्रस्थी के आवश्यक कर्तव्य हैं । उपासना भी उसी प्रकार उभय पक्षीय है । भगवान का भजन, ध्यान, पूजन, जप, कीर्तन एक पक्ष है, दूसरा पक्ष विश्व मानव के, विराट् ब्रह्म के इस मूर्तिमान स्वरूप संसार की रचनात्मक सेवा करने से, विचार और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कार्य का समन्वय होने से भजन में समग्रता आती है । जो केवल माला फेरते हैं, सेवा से कतराते हैं, उनका भजन वैसा ही है जैसा कि रोटी तो खाना पर पानी न पीना । आहार–विहार का संयम शारीरिक, मानसिक स्वस्थता की दृष्टि से आवश्यक है । इन्द्रिय निग्रह की तपश्चर्या से मनुष्य की भावनात्मक प्रवृत्तियों का मोड़ वासना, तृष्णा से हटकर परमार्थ प्रयोजनों की ओर प्रवाहित होता है । यह सारी विधि–व्यवस्था ऐसी है जिससे वयोवृद्ध व्यक्ति अपनी अन्तःचेतना को उस मार्ग पर विकसित करते हैं जिस पर चलते हुए मरणोत्तर यौवन में अक्षय सुख–शान्ति को प्राप्त कर सकना सरल हो जाता है ।

लोक शिक्षण की आवश्यकता–इस गतिविधि के अपनाने से समाज की भी भारी सेवा होती है । प्राचीनकाल में लोक निर्माण की सारी गतिविधियाँ एवं प्रवृत्तियों के संचालन का उत्तरदायित्व साधु, ब्राह्मण, वानप्रस्थों पर ही था । वे अपनी सारी शक्तियाँ परमार्थ भावना से प्रेरित होकर जन साधारण को सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त किए रहने में लगाये रहते थे । फलस्वरूप चारों ओर धर्म, कर्तव्य, सदाचार का वातावरण ही बना रहता था । वयोवृद्ध, अनुभवी, परमार्थ परायण लोक सेवियों का प्रभाव जन–साधारण पर स्वभावतः बहुत गहरा पड़ता है । टिकाऊ भी होता है । ऐसे लोग जन नेतृत्व करने के लिए जब धर्मतंत्र का उचित उपयोग करते थे तो सारे समाज में सत्प्रवृत्तियों के लिए उत्साह उमड़ पड़ता था । शिक्षा, स्वास्थ्य, सदाचार, न्याय, विवेक, वैभव, शासन, सुरक्षा, व्यवस्था आदि सभी क्षेत्रों में यह वयोवृद्ध लोग ही नेतृत्व करते थे । इतने अधिक अनुभवी और धर्म परायण व्यक्तियों की निःशुल्क सेवा जिस देश या समाज को उपलब्ध होती हो उसको संसार का मुकटमणि होना ही चाहिए । प्राचीन काल में ऐसी ही स्थिति थी । आज वानप्रस्थ की परम्परा नष्ट हुई, बूढ़े लोगों को लोभ, मोह के बन्धनों में ही ग्रसित रहना प्रिय लगा तो फिर देश का पतन अवश्यंभावी था, हुआ भी, हो भी रहा है ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

यह पुण्य परम्परा पुनः सजीव हो–प्रयत्न यह किया जाना चहिए कि समाज में पूर्वकाल की भाँति यह प्रथा प्रचलित हो कि हर ढलती आयु का व्यक्ति वानप्रस्थ लेकर पारमार्थिक जीवन जिए और समाज द्वारा विविध–विध प्राप्त हुई सुख–सुविधाओं का ऋण वृद्धावस्था में समाज सेवा का व्रत लेकर चुकाये । अपना परलोक सुधारे, जीवन सार्थक करे और संसार को सुरम्य बनाने में समुचित योगदान करे ।

मूल प्रयोजन समझा जाय–वानप्रस्थ का मूल प्रयोजन अपनी आत्मीयता एवं ममता को छोटे से परिवार तक सीमित न रखकर विश्व–मानव तक विस्तृत एवं विकसित कर देना है । आत्मोन्नति इसी को तो कहते हैं । आत्मा तो सीढ़ियों पर चढ़ती है और न उसकी धन, वजन, पद आदि की दृष्टि से उन्नति होती है । जितने छोटे दायरे में पहले अपनेपन का भाव सीमित था, वह यदि बढ़ता है, विस्तृत होता है, अनेकों परिवार अपने ही परिवार दीखते हैं और अनेकों व्यक्ति अपने ही कुटुम्बी लगते हैं, तो समझना चाहिए कि आत्मा की, उसके दृष्टिकोण एवं सद्भाव की वृद्धि हुई है । यही प्रगति आत्मा को परमात्मा एवं नर को नारायण बनाती है । जब तक मनुष्य अपने शरीर एवं परिवार को ही अपना मानेगा तथा अन्य शरीरों के प्रति परायेपन का भाव रखेगा तब तक वह बन्धनों में बँधा हुआ ही कहा जायगा । स्वार्थपरता के बन्धन जैसे–जैसे ढीले होते जाते हैं, परमार्थ में स्वार्थ दिखाई देता है, बिराने, अपने जैसे लगते हैं और अपनों के प्रति जो ममता होती है, वह विस्तृत होकर सर्वसाधारण के लिए व्यापक हो जाती है । तब यह समझा जाता है कि आत्मा अपनी लघुता छोड़कर महान् बनने के लिए अणु से विभु और आत्मा से परमात्मा बनने के लिए अग्रसर हो रही है । भजन करने का उद्देश्य इसी स्थिति को प्राप्त करने का मनोवैज्ञानिक व्यायाम करना है । यह लघुता जैसे–जैसे महानता में, स्वार्थपरता "वसुधैव कुटुम्बकम्" स्तर में विकसित होती जाती है, वैसे ही वैसे ईश्वर अपने निकट आता जाता है । जिस दिन सबमें अपनी ही आत्मा प्रकाशवान् दिखाई पड़े तो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कहते हैं कि शारीरिक साक्षात्कार हो गया । इसी प्रकार यदि अपनेपन का भाव अन्य शरीर रूपी दर्पणों में दीख पड़े तो समझना चाहिए आत्म–साक्षात्कार होने लगा । स्वप्न में किसी देवता की प्रतिमा दीख पड़ना या जाग्रत अवस्था में ध्यान, एकाग्रता से कोई उपासना प्रतीक चलते–फिरते नजर आ जाना, यह तो अपनी कल्पना की सघनता अथवा भावना की एकग्रता का छोटा–सा चमत्कार मात्र है । ऐसे भाव दर्शन तो उन प्रियजनों के भी होते रहते हैं जिनके प्रति अपना आकर्षण अधिक होता है । इनका अधिक मूल्य या महत्व नहीं । इस प्रकार का अनुभव यदि किसी को होने लगे तो उससे यह मान्यता न बना लेनी चाहिए कि हमें ईश्वर–दर्शन हो गये या भगवान की अनुकम्पा प्राप्त हो गई । वास्तविक आत्म–साक्षात्कार तो प्राणिमात्र में ईश्वर की सत्ता समाई हुई देखकर, उनके प्रति सद्व्यवहार करने की भावना का उदय होने को ही कहते हैं । कल्याण तो उसी स्थिति में पहुँचने वाले का ही होता है ।

योगाभ्यास एवं तपश्चर्या–वानप्रस्थ में इसी आत्म–विस्तार का योगाभ्यास करना पड़ता है । यह सब कहने–सुनने में तो सरल है, पर करने में कठिन है । जब तक कोई मान्यता व्यवहार रूप में न उतरे तब तक मान्यता का कोई वास्तविक मूल्य नहीं होता है । सर्वव्यापी परेमश्वर की प्रत्यक्ष आराधना, उपासना, सेवा–धर्म अपनाये बिना नहीं हो सकती । इसलिए वानप्रस्थ में नर–नारायण की सेवा के लिए विस्तृत कार्यक्रम बनाना पड़ता है और अपने अधिकांश समय, श्रम, धन एवं मनोयोग इसी प्रयोजन के लिए समर्पित करने होते हैं । यह कर्म–पद्धति विशुद्ध रूप से योग साधना एवं तपश्चर्या है । धूप में या पानी में खड़े रहने की अपेक्षा जन–सेवा की साधना अधिक उपयुक्त है क्योंकि उससे दूसरों को लाभ पहुँचता है और अपने को तत्काल सन्तोष मिलता है । धूप में खड़े रहने से उन दोनों में से एक भी प्रयोजन नहीं सधता, न किसी को लाभ पहुँचता है और न अपने अन्तःकरण में कुछ श्रेष्ठ कार्य करने जैसा सन्तोष ही अनुभव होता है ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ईश्वर उपासना एवं भजन–वह भजन भी करता है और भक्ति भी । प्रातः–सायं श्रद्धापूर्वक प्रभु का नाम स्मरण करता है–गायत्री मन्त्र जपता है, हृदय खोलकर प्रभु के सामने रखता है, आध्यात्मिक दृष्टिकोण एवं गुण–कर्म–स्वभाव में उत्कृष्टता बढ़ाने की प्रार्थना करता है, सत्पथ पर चलने में आने वाली कठिनाइयों से जूझ सकने लायक आत्मबल एवं साहस की याचना करता है । भाव–विभोर होकर की हुई ऐसी प्रार्थना भी ईश्वर के अन्तःस्थल पर चोट करती है । ऐसे सच्चे सदुद्देश्य के लिए, न्याय और नीति की मर्यादायें सुरक्षित रखने वाली प्रार्थना सुनकर ईश्वर द्रवित हो उठता है और वह उस ज्ञानी भक्त के ऊपर अपने प्यार की, अनुग्रह की, अविरल वर्षा करने लगता है ।

ऐसे ईश्वर–भक्त वानप्रस्थ के लिए यह आवश्यक नहीं कि पूरा दिन माला घुमाने में ही लगा दे । महात्मा गांधी की तरह वह एक घण्टे भी सच्चे मन से निकली हुई, ईश्वर की अन्तरात्मा को छूने वाली पुकार–प्रार्थना करता रहे, तो वह चौबीस घण्टे आँख बन्द किए ध्यान–भजन करते रहने से कहीं अधिक श्रेयस्कर है । धर्म युद्ध के मोर्चे पर लड़ने वाले सैनिक यदि अपना गोला–बारूद चलाते हुए दो–पाँच मिनट भी ईश्वर का नाम ले लिया करें तो वह उनका पूरा सन्ध्या–वन्दन हो जाता है । वह कथा प्रसिद्ध है जिसके अनुसार एक देवदूत की बगल में भक्तों की नामावली देखकर किसी लोकसेवी ने इसमें अपना नाम होने न होने की जिज्ञासा की थी । नाम न निकला तो दुःखी भी हुआ था, पर जब दूसरा देवदूत आया और उसकी बगल में लगी छोटी पुस्तक के बारे में लोकसेवी ने पूछ–ताछ की तो देवदूत ने बताया कि उसमें उन लोगों के नाम हैं जिनका भजन ईश्वर स्वयं करते हैं और उस पुस्तक में सबसे पहले इस लोकसेवी का नाम था ।

कथा चाहे अलंकारिक ही क्यों न हो पर उसमें एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वास्तविकता का नग्न उद्घाटन किया गया है । एक महान सचाई को ज्यों की त्यों खोलकर रख दिया गया है । अध्यात्मवाद का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

सार यही है । भजन शब्द 'भज्' धातु से बना है जिसका अर्थ 'सेवा' ही होता है । कहते भी हैं 'पूजा–सेवा' करते हैं । पूजा, सेवा के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है । जिस विधान में सेवा सम्मिलित नहीं वह न तो पूजा है न आराधना । सेवा की गंगा में स्नान किए बिना किसी की आत्मा पवित्र नहीं हो सकती । जो ईश्वर का अनुग्रह चाहता है, उसे ईश्वर के पुत्रों पर अनुग्रह करना होता है । जो मनुष्य रूपी खेतों में दया के बीज बोता है, उसे ही ईश्वर की छाया प्राप्त करने का प्रतिफल उपलब्ध होता है । जनता–जनार्दन की, नर–नारायण की, पुरुष–पुरुषोत्तम की भक्ति करने के लिए सेवा–धर्म को जीवन में ओत–प्रोत करना होता है और यही वह तपश्चर्या है जिसके आधार पर वानप्रस्थ को या किसी को भी प्रभु का वास्तविक अनुग्रह प्राप्त कर सकना संभव होता है ।

स्वेद एवं स्नेह का अभिसिंचन–वानप्रस्थ की उपासना पद्धति लोक–सेवा के साथ जुड़ी रहती है । यह प्रातः–सायं आवश्यक पूजा–भजन करता रहता है, साथ ही दिन–रात अपने चारों ओर ईश्वर की चलती–फिरती प्रतिमाओं को अपने स्वेद एवं स्नेह से सिंचित करने का भी ध्यान रखे रहता है । इस भावना से प्रेरित होकर वह अपनी योग्यता और निकटवर्ती परिस्थितियों का तालमेल बिठाकर इस प्रकार के कार्यक्रम बनाता रहता है, जिनके आधार पर समीपवर्ती लोगों का आन्तरिक स्तर ऊँचा उठे, विवेक जागे, सत्प्रवृत्तियों का उदय हो और गुण, कर्म, स्वभाव में परिष्कार आरम्भ हो । मनुष्य का आन्तरिक स्तर ऊँचा उठाना, यही तो उस पर अमृत वर्षा करना है । जिस आत्मा का बुझा हुआ प्रकाश चमक उठा, समझना चाहिए कि उसके लिए सभी विभूतियों को प्राप्त करने का द्वार खुल गया । मनुष्य अपनी कुपात्रता के फलस्वरूप ही अवनति के गर्त में पड़ा नरक भोगता रहता है । जब उसकी पात्रता प्रखर होती है, तो वह गई–गुजरी परिस्थितियों को तोड़–मरोड़ कर रख देता है और हर हालत में अपने लिए स्वर्गीय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

परिस्थितियों का निर्माण कर लेता है । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है, जिसने अपनी गतिविधियों के निर्माण की कला सीख ली उसके भाग्योदय में देर ही कितनी लगती है । इन तथ्यों की वास्तविकता को समझते हुए वानप्रस्थ के सेवा कार्य–क्रमों का क्रम उसी प्रकार बनता है जिससे समीपवर्ती लोग सद्विचारों एवं सत्कर्मों को अपनाने की प्रेरण प्राप्त करें । इससे बढ़कर मनुष्य की और कुछ सेवा हो भी नहीं सकती । अन्न, वस्त्र, धन आदि देने से किसी की क्षणिक आवश्यकताऐं पूर्ण होती हैं और कुछ समय बाद वही अभाव फिर सामने आ उपस्थित होता है, पर जिसका अन्तःकरण, मानसिक स्तर एवं चरित्र ऊँचा उठा दिया गया, वह तेजी से आगे बढ़ता है, अपना उद्धार करता है और दूसरे अनेकों के लिए प्रकाश स्तम्भ का काम करता है ।

जो कार्य–पद्धति साधु–ब्राह्मणों की सदा से रही है उसी को वानप्रस्थी अपनाते हैं । जन–जागरण, विवेक का परिष्कार, चरित्रगठन, सद्भाव–अभिवर्धन, कर्तव्य–पालन, सहृदयता एवं सेवा भावना का उन्नयन जिन भी कार्यों के द्वारा सम्भव हो सके, उनका आयोजन करते रहना ही उसे अभीष्ट होता है । चूँकि इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ धार्मिक वातावरण में ही पनपती और परिपुष्ट होती हैं इसलिए उसे ऐसे धार्मिक कर्मकाण्डों, विधि–विधानों, आयोजनों, उत्सवों एवं रचनात्मक क्रम–विधानों की भी व्यवस्था करनी होती है, जिससे धर्म–शिक्षा के उपयुक्त वातावरण विनिर्मित हो सके । स्वाध्याय एवं सत्संग का, शिक्षा एवं विद्या का कोई न कोई विधि–विधान उसे रचते ही रहना पड़ता है । जनसम्पर्क के लिए सम्मान एवं संकोच को छोड़कर घर–घर अलख जगाता फिरता है । जन–जन के पास जाता है, कोई उसकी उपेक्षा करता है या उपहास करता है तो भी विचलित नहीं होता, वरन् ऊसर में खेती करने वाले साहसी किसान की तरह दिन, रात चौगुने उत्साह के साथ अपने प्रयत्नों को जारी ही रखे रहता है ।

शतसूत्री साधना क्रम–युग निर्माण योजना के अन्तर्गत शतसूत्री

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कार्यक्रमों की सुविस्तृत श्रृंखला इसी उद्देश्य से बनाई गई है । आज की परिस्थितियों में जिन सर्वांगीण सुधार–सेवाओं की आवश्यकता है, उन्हें इस शतसूत्री योजना में जोड़ दिया गया है । साधु–ब्राह्मणों और वानप्रस्थों को इनमें से जो भी कुछ जहाँ जिस प्रकार करना उपयुक्त लगे, वहाँ–वहाँ आरम्भ किया जा सकता है । कार्यक्रमों का बाह्य माध्यम कुछ भी क्यों न हो, उसके मूल में व्यक्ति के अन्तःकरण का विकास ही सन्निहित रहना चाहिए । भौतिक उन्नति की योजनाओं में दूसरे लोग लगे हैं, वह राजनैतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में संलग्न व्यक्तियों का काम है । उनमें हमें नहीं उलझना चाहिए । धार्मिक लोगों का सेवा–क्षेत्र विशुद्ध रूप से भावनात्मक होना चाहिए । यह इतना बड़ा और महत्वपूर्ण है कि उसे यदि धर्मक्षेत्र के लोग पूरा कर सकें तो मानव जाति की अगणित समस्याओं में से ९९ प्रतिशत का हल हो सकता है । भौतिक लाभ बढ़ जाय किन्तु आन्तरिक स्तर गिरा रहे तो मनुष्य का कुछ भी भला न होगा किन्तु यदि आत्मिक स्तर उठ जाय तो भौतिक स्तर गिरा हुआ रह ही नहीं सकता, यदि रहे भी तो उससे कुछ बिगड़ नहीं सकता । अतएव जन–मानस में सद्भावनाओं की, सत्प्रवृत्तियों की कृषि करना और उसे सुरभित फलते–फूलते उद्यान के रूप में बनाये रहना, यही साधु पुरुषों का काम होता है । चतुर माली की तरह वे धार्मिकता, आध्यात्मिकता एवं सुसंस्कारिता की वाटिका को सुरम्य बनाने में एक कर्मठ माली की तरह लगे रहते हैं । इस साधना एवं तपश्चर्या में लगा हुआ उनका प्रत्येक स्वेद–बिन्दु प्रत्येक भाव–कण उनके स्वयं के लिए ही नहीं समस्त संसार के लिए वरदान बनकर सामने आता है, उससे विश्व–शान्ति की वास्तविक सम्भावना का सृजन होता है ।

जिनके जीवन का पूर्वार्द्ध बीतने की सीमा तक पहुँचा हो, उन्हें विचार करना चाहिए कि क्या शेष जीवन भी इसी तरह गुजारना है जैसा कि आम लोग गुजारते हैं ? मनुष्य जीवन की महत्ता एवं उसके अनुपम सौभाग्य का मूल्य–महत्व हमें समझना चाहिए और इस अलभ्य

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अवसर को ऐसे ही अर्धतन्द्रित अवस्था में बिता नहीं देना चाहिए । उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कुछ करना ही चाहिए, जिनके लिए यह मनुष्य जन्म मिला है । समाज का वह ऋण चुकाना ही चाहिए जिसका लाभ हम तथा हमारे परिवारी उठा रहे हैं । पत्नी की वैसी स्थिति न हो तो उसका कर्ज भी हम चुकावें, क्योंकि वह आत्म–समर्पण करने के बाद अपने को लय कर चुकी तो उसकी जिम्मेदारी भी अपने ही ऊपर आ गई । माता–पिता कर्ज छोड़ मरते हैं तो वह भी बेटे को चुकाना पड़ता है । यदि हमारे माता–पिता कोई अभिनव आदर्श अपने पीछे नहीं छोड़ गये हैं, या बिना समाज का ऋण चुकाये ही रह गये हैं, तो वह भी हमें चुकाना चाहिए । वानप्रस्थ व्रत लेकर अपने को और अपने परिवार को एक नैतिक ऋण से मुक्त करना चाहिए । सेवा धर्म अपनाये बिना जीवन की सार्थकता नहीं हो सकती । इसलिए विचारशीलता एवं दूरदर्शिता का आश्रय लेकर हमें यही निश्चय करना चाहिए कि जीवन का उत्तरार्द्ध पारमार्थिक कार्यों के लिए समर्पित कर दिया जाय ।

जन्म–जन्मान्तर की यातना सहकर आज जो हमने यह मानव जीवन पाया है, इस अमूल्य जीवन का सदुपयोग कर परमात्म सत्ता का ज्ञान प्राप्त करें । हम जान लें कि हम उसी प्ररमात्म सत्ता के अंश हैं । यह बड़ी मूर्खता होगी कि हम अपने उस सत्य स्वरूप को पाने का प्रयत्न न कर पुनः असंख्यों अधम योनियों में भटकने के लिए वापस चले जायें, इसे पागलपन के सिवाय और क्या कहा जा सकता है । जो जिन कक्षाओं को उत्तीर्ण कर चुका है और उन्हीं में वापस जाने की सोचे । उच्च पद पर से पतित हो जाने से बढ़कर जीवन की असफलता और क्या हो सकती है ? पर यदि हम परमात्मा को पाने के लिए उसके उपाय में समय रहते नहीं लगते तो इस अमूल्य मानव जीवन की निस्सारता एवं असफलता की आशंका बनी ही रहेगी । अतः उस उच्च स्थिति को पाने तक हमारा पावन कर्तव्य है कि हम ईश्वर प्राप्ति को शेष जीवन की अनिवार्य आवश्यकता बनाकर तदनुरूप जीवन व्यतीत करें । स्मरण रखिए जिसको जीवन के सदुपयोग की चिन्ता हो गई,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जिसने सत्य का, धर्म का तथा पवित्रता का अवलम्बन ग्रहण कर लिया उसे अपने अन्दर आत्म–सन्तोष और बाहर से सहयोग एवं सम्मान की तरंगें उठती दिखाई देंगी और वह परमानन्द में निमग्न होकर मानव जीवन भर की सफलता का रसास्वादन कर रहा होगा । ईश्वर ने हमें इस कर्मक्षेत्र में मुख्यतः भेजा ही इसीलिए है कि हम सत्कर्म और सात्विकी साधना तथा उपासना करके दैवी मार्ग पर अग्रसर हों और जीवन को उच्चतर बनाते हुए अपने महान लक्ष्य को प्राप्त करें अतः श्रद्धा, लगन व दृढ़ आत्म–विश्वास के साथ अपने इस शेष जीवन को लक्ष्य प्राप्ति के निमित्त उत्सर्ग करने में नियोजित कीजिए ।

मुद्रक: युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org